जीवन-राग [खंड : 2]

जीवन-दर्शन से सम्बद्ध कविताएँ

[महेंद्रभटनागर]

(27) संतरण

.

149 ओ भवितव्य के अश्वो!
150 आस्था
151 आस्था का उपहार
152 आदमी और स्वप्न
153 जीवन
154 प्रतिकार्य
155 टूटना मत
156 अनुबोध
157 विडम्बना
158 तुम नहीं पहचान पाओगे!

159 जीवन : एक अनुभूति
160 एक साँझ
161 रात बीतेगी
162 अनचाहा
163 क्या पता था
164 राज़ क्या है
165 अनाहूत स्थितियों से
166 प्रार्थना
167 अविश्वसनीय
168 पुनर्जन्म
169 धरती का गीत
171 कला-साधना
172 गाओ
173 भूमिका
174 अंकुर
175 थमना कैसा
.
(18) जिजीविषा
.
176 हिम्मत न हारो
177 अप्रतिहत
178 व्यथा
179 संकल्प-विकल्प
180 क्षिप्रा के किनारे
181 न रुकते चरण
182 सहारा
183 जीवन नहीं
184 हमें यह पता है

185 साथी
186 यह नहीं मंज़िल
187 स्वर-साधना
188 प्राण-दीप
189 नयी किरणें
190 तूफ़ानों का स्वागत
191 परिचय
192 नयी ज़िन्दगी
.
(1) नयी चेतना
.
193 गन्तव्य
.
(8) टूटती शृंखलाएँ
.
194 जब-जब
195 विश्वास
196 बहुत हुआ बस रहने दो
197 मन
198 कौन से सपने
199 निशा का युग
200 जीवन-दीप
201 चाह
.
(2) बदलता युग
.
202 सोओ नहीं
203 स्थितियाँ और द्वन्द्व
.

(1) अभियान
.
204 कहाँ अवकाश
.
(33) अन्तराल
.
205 गन्तव्य की ओर
206 साधना
207 स्नेह-सुधा-जल
208 जीवन-पथ के राही से
209 संघर्ष
210 दीप
211 मनुज जीवन
212 धोखा हुआ
213 साधना का मर्म
214 जीवन-तरु
215 रे मन
216 आँसुओं का मोल
217 बहने देना
218 चुनौती
219 विनाश
220 विकास
221 जागरण
222 रस-संचार
223 वरदान
224 परिवर्तन
225 एकाकीपन
226 साथी से

227 गाओ गीत
228 तुम
229 उन्मेष
230 कामना
231 जीवन का अभिनय
232 नहीं है
233 सत्य
234 वेदना
235 अभी नहीं
236 जल्दी करो
237 जीवन-धारा
.
(12) विहान
.
238 जीवन-दृष्टि
239 आशिष्
240 असह
241 अन्तर्बोध
242 प्रतिकूलता
243 आशा-किरण
244 जीवन-ज्वाला
245 निवेदन
246 स्वावलंबन
247 समरस
248 सुख-दुख
249 काम्य
.
(149) ओ भवितव्य के अश्वो!

.
ओ भवितव्य के अश्वो !
तुम्हारी रास
हम
आश्वस्त अंतर से सधे
मज़बूत हाथों से दबा
हर बार मोड़ेंगे !
.
वर्चस्वी,
धरा के पुत्र हम
दुर्धर्ष,
श्रम के बन्धु हम
तारुण्य के अविचल उपासक
हम तुम्हारी रास
ओ भवितव्य के अश्वो !
सुनो
हर बार मोड़ेंगे !
.
ओ नियति के स्थिर ग्रहो !
श्रम-भाव तेजोदृप्त
हम
अक्षय तुम्हारी ज्योति
ग्रस कर आज छोड़ेंगे !
.
तितिक्ष अडिग
हमें दुर्ग्रह नहीं अब
अंतरिक्ष अगम्य !
निश्चय

ओ नियति के
पूर्व निर्धारित ग्रहो !
हम....
हम तुम्हारी ज्योति
ग्रस कर आज छोड़ेंगे !
.
ओ अदृष्ट की लिपियो !
कठिन प्रारब्ध हाहाकार के
अविजेय दुर्गो !
हम उमड़
श्रम-धार से
हर हीन होनी की
लिखावट को मिटाएंगे,
मदिर मधुमान
श्रम संगीत से
हम
हर तबाही के
अभेदे दुर्ग तोड़ेंगे !
ओ भवितव्य के अश्वो !
तुम्हारी रास मोड़ेंगे !
.
• •
(150) आस्था
.
सींचो !
कण-कण को सींचो !
हर सूखे बिरवे को पानी दो,
टूटे उखड़े झाड़ों को

अभिनव बल
फिर-फिर बढ़ने की
तेज़ रवानी दो
हर सूखे बिरवे को पानी दो !
नंगी-नंगी शाखों को
जल-कण मुक्ता भूषण दो
चिर बाँझ धरा को
जल का आलिंगन दो
शीतल आलिंगन दो !
.
शायद
गहरी-गहरी परतों के नीचे
जीवन सोया हो,
तम के गलियारों में खोया हो !
.
सींचो
अन्तस् की निष्ठा से सींचो,
शायद
चट्टानों को फोड़ कहीं,
नव अंकुर डहडहा उठें,
बाँझ धरा का गर्भस्थल
नूतन जीवन से कसमसा उठे !
.
सींचो
कण-कण को सींचो !
हर मिट्टी में गर्मी है
हर मिट्टी पूत प्रसव-धर्मी है !
.
• •

(151) आस्था का उपहार

.

भाग्य से
अथवा जगत से
हर प्रताड़ित व्यक्ति को
आजन्म संचित स्नेह मेरा
है समर्पित !

.

लक्ष्य हैं जो
सृष्टि के अव्यक्त निर्मम हास के
या जगत उपहास के
प्राण गौरव की सुरक्षा के लिए
लघु गेह मेरा
है समर्पित !

.

ओ, विश्व भर के
पददलित पीड़ित पराजित मानवो !
जीवन्त नव आस्था
नये विश्वास के
मद महकते उत्फुल्ल गुलदस्ते
तुम्हारे साधु स्वागत में
समर्पित हैं !

.

जीवन को सजा लो,
लोक की मधु-गंध
प्राणों में बसा लो !

.

• •

(152) आदमी और स्वप्न

.
आदमी का प्यार सपनों से
सनातन है !
मृत्यु के भी सामने
वह, मग्न होकर देखता है स्वप्न !
सपने देखना, मानों,
जीवन की निशानी है ;
यम की पराजय की कहानी है !
.
सपने आदमी को
मुसकराहट — चाह देते हैं,
आँसू — आह देते हैं !
.
हृदय में भर जुन्हाई-ज्वार,
जीने की ललक उत्पन्न कर,
पतझार को
मधुमास के रंगीन-चित्रों का
नया उपहार देते हैं !
विजय का हार देते हैं !
.
सँजोओ, स्वप्न की सौगात,
महँगी है !
मिली नेमत,
इसे दिन-रात पलकों में सहेजो !
'स्वप्नदर्शी' शब्द
परिभाषा 'मनुज' की,
गति-प्रगति का
प्रेरणा-आधार;

संकट-सिंधु में
संसार-नौका की
सबल पतवार ;
गौरवपूर्ण सुन्दरतम विशेषण।
स्वप्न-एषण और आकर्षण
सनातन है, सनातन है !
आदमी का प्यार सपनों से
सनातन है !
.
• •
(153) जीवन
.
जीवन हमारा फूल हरसिंगार-सा
जो खिल रहा है आज,
कल झर जायगा !
.
इसलिए,
हर पल विरल
परिपूर्ण हो रस-रंग से,
मधु-प्यार से !
डोलता अविरल रहे हर उर
उमंगों के उमड़ते ज्वार से !
.
एक दिन, आख़िर,
चमकती हर किरण बुझ जायगी...
और
चारों ओर
बस
गहरा अँधेरा छायगा !

जीवन हमारा फूल हरसिंगार-सा
जो खिल रहा है आज,
कल झर जाएगा !
.
मत लगाओ द्वार अधरों के
दमकती दूधिया मुसकान पर,
हो नहीं प्रतिबंध कोई
प्राण-वीणा पर थिरकते
ज़िन्दगी के गान पर !
.
एक दिन
उड़ जायगा सब ;
फिर न वापस आयगा !
जीवन हमारा फूल हरसिंगार-सा
जो खिल रह है आज,
कल झर जायगा !
.
• •
(154) प्रतिकार्य
.
रे हृदय
उत्तर दो
जगत के तीव्र दंशन का
राग-रंजित,
सोम सुरभित साँस से !
.
स्वीकार्य
जीवन-पंथ पर...
दर्द हर उपेक्षा का

शांत उज्ज्वल हास से !
.
आतिथेय
घन तिमिर के
द्वार पर
स्वर्ण किरणों की
असंशय आस से !
.
आराध्य
वज्रघाती देव
प्राण के संगीत से,
प्रेमोद्गार से
अभिरत रास से !
.
रे हृदय !
उत्तर दो
जगत के क्रूर वंचन का
स्नेहल भाव से,
विश्वास से !
.
• •
(155) टूटना मत
.
रे हत हृदय,
टूटना मत !
विपद् घोर-घन-चोट सहना !
दहकती
दुखों की प्रबल भट्ठियों में
सतत मूक दहना !

अकेले
गरल-तप्त-धारों-उमड़ती
नदी में निरन्तर, निराक्रांत बहना !
.
अनादृत हृदय,
टूटना मत !
अँधेरी-अँधेरी घटाएँ,
सबल सनसनाती हवाएँ...!
विवह लहरता,
दबा, त्रस्त वातावरण !
क्रूर,
जैसे हुआ हो अभी,
हाँ, अभी,
राम,
सीता-हरण !
रे हृदय
टूटना मत !
.
नहीं दूर अब और
अभिनव, अनागत सुबह,
रुक्ष, उन्मन,
करुण, कृष्ण
छाया न ग्रस ले उसे,
मुसकराकर
बढ़ो,
हे हृदय,
सार्थ करने सुलह
पास

अभिनव, अनागत सुबह !

.

• •

(156) अनुबोध

.

गहन अंतर में
पीर भर लो !
तरल आँखों में
नीर भर लो !

.

पीर ही देगी तुम्हारा साथ
थाम लो इसका
करुण-निधि-रेख अंकित हाथ,
हिम-शीत प्यारा हाथ !
रे यही देगा तुम्हारा साथ
वर लो !

.

सांध्य-जीवन के
थके बोझिल क्षणों में
कुहर-गुंठित सजल धूमिल क्षणों में
तम घिरे घर में
पीर वर लो !
लौह अंतर में
पीर भर लो !
अचल आँखों में
नीर भर लो !

.

ले
असीमित क्षार-सागर

वज्र-विज्ञापित-बवण्डर
अतिथि बन
मेघ आये हैं,
तुमको घेर छाये हैं
प्यार कर लो !
वेदना उपहार लाये हैं
सहज स्वीकार कर लो !
टूटते कमज़ोर कंधों पर
पर्वतों का भार
धर लो !
गहन अंतर में
पीर भर लो !
तरल आँखों में
नीर भर लो !
.
• •
(157) विडम्बना
.
हमने
जीवन भर
हाँ,
जीवन भर
मन की हर क्यारी में
सहज खिलाये
भावों के सुरभित फूल !
.
हमने
जीवन भर

हाँ,
जीवन भर
मन के निस्सीम गगन में
उन्मुक्त उड़ाये
अनिंद्य कल्पनाओं के
बहुरंगी दिव्य दुकूल !
.
हमने
जीवन भर
हाँ,
जीवन भर
मन की गहरी-से-गहरी
उपत्यका में
वैदग्ध्य विचारों के
सूरज चाँद उगाये
कर दूर तमस आमूल !
.
पर,
हाय विधाता !
यह कैसी अद्भुत भूल ?
घेरे तन को
अनगिनत नागफाँस नुकीले शूल,
अविराम थपेड़े झंझा के
उपहारों में देते
वंध्य विषैली धूल !
.
• •
(158) तुम नहीं पहचान पाओगे
.

एकरसता, एकस्वरता
बन गया है नाम जीवन का,
विषैले पन्नगों से बद्ध
मानों वृक्ष चंदन का !
.
सुबह होती
उदासी की विकल किरणें लिए,
अभावों के धधकते सूर्य की
आकुल विफल किरणें लिए !
तन क्लथ अलस-आहत
विरागी प्रेत-सा मन क्लथ
विगत विक्षत,
दिवस विकलांग-सा कंपित
विखंडित रथ लिये
सुनसान बीहड़ से
असह चिर वेदना का भार ले
संध्या निशा के गर्त में
जब डूब जाता है
तुम नहीं पहचान पाओगे
अभागा प्राण कितना ऊब जाता है !
रात आती है
कि मानों निठुर छलना
बन वधू साकार आती है,
रँगीले झिलमिलाते
स्वप्न परदों से
नवेली झाँक कर
सौगात तीखी वंचना की

गोद में बस डाल जाती है !
अछूती भावनाएँ तरल लहरों-सी
कड़ी चट्टान से टकरा
दरद का ज्वार लाती है !
.
बीतता है इस तरह जीवन
लिए बस
एकरसता एकस्वरता का
करुण संसार,
दुर्लभ —
मूर्च्छना संगीत,
पुलकित स्वर,
सुवासित हर्ष,
इन्द्रधनुषी प्यार !
.
• •
(159) जीवन : एक अनुभूति
.
बिखरता जा रहा सब कुछ
सिमटता कुछ नहीं !
.
ज़िन्दगी :
एक बेतरतीब सूने बंद कमरे की तरह,
दूर सिकता पर पड़े तल-भग्न बजरे की तरह,
हर तरफ़ से कस रहीं गाँठें
सुलझता कुछ नहीं !
.
ज़िन्दगी क्या ?
धूमकेतन-सी अवांछित

जानकी-सी त्रस्त लांछित,
किस तरह हो संतरण
भारी भँवर, भारी भँवर !
हो प्रफुल्लित किस तरह बेचैन मन
तापित लहर, शापित लहर !
.
ज़िन्दगी :
बदरंग केनवस की तरह
धूल की परतें लपेटे
किचकिचाहट से भरी,
स्वप्नवत है
वाटिका पुष्पित हरी !
हर पक्ष भावी का भटकता है
सँभलता कुछ नहीं !
.
पर,
जी रहा हूँ
आग पर शय्या बिछाये !
पर,
जी रहा हूँ
शीश पर पर्वत उठाये !
पर, जी रहा हूँ
कटु हलाहल कंठ का गहना बनाये !
ज़िन्दगी में बस
जटिलता ही जटिलता है
सरलता कुछ नहीं !
.
• •

(160) एक साँझ

.

जीवन
अर्थ-सूनापन !
नहीं कुछ भी नया
सदा-सा
आज भी
दिन ढल गया !

.

भटकती धूप
आयी,
कुछ क्षण
चाहा बिताएँ साथ
पर, अँधेरा ही
आया हमारे हाथ !

.

डोलते आये विहंगम,
चित्रवत्
देखते केवल रहे हम !
नहीं कोई रुका;
सदा-सा
एकरस बहता रहा,
बोझिल मन थका
सहता रहा !
जीवन
अर्थ-सूनापन,
सूनापन !

.

• •

(161) रात बीतेगी

.

अँधेरा....

रात गहरी है,

रात बहरी है !

.

बहुत समझाया कि

सो जा !

रे मन

थके ग़मगीन मन

ज़िन्दगी के खेल में हारे हुए

दुर्भाग्य के मारे हुए

रे दरिद्र मन

सो जा !

.

रात सोने के लिए है

सपने सँजोने के लिए है,

कुछ क्षणों को

अस्तित्व खोने के लिए है,

तारिकाओं से भरी यह रात

परियों-साथ सोने के लिए है !

सो !

.

दर्द है,

और सूनी रात बेहद सर्द है !

.

जीवन नहीं अपना रहा,

अब न बाक़ी देखना सपना रहा !

.

रात...
जगने के लिए है !
..... बेचैनियों की भट्ठियों में
फिर-फिर सुलगने के लिए है !
.
रात....
गहरी रात
बहरी रात
हमने बिता दी
जग कर बिता दी !
.
कल फिर यही होगा
अँधेरा आयगा !
खामोश
धीरे
बड़े धीरे
कफ़न-सा
फिर अँधेरा आयगा !
रे मन
जगने के लिए
चुपचाप
आँखें बन्द कर लेना,
भीतर सुलगने के लिए
ज़िन्दगी पर राख धर लेना !
.
रात
काली रात
बीतेगी .... बीतेगी !

.
• •
(162) अनचाहा
.
केसर-सी मधु-गंधि
कुमारी अभिलाषाएँ,
अन्तरतम में संचित
युगों सहेजी आशाएँ
परित्यक्ता हैं !
.
निर्मल भोली
लगता था : मेरी हो लीं !
नेह भरी दिन भर डोलीं,
यामा में
मदहोश गुलाबी आँखें खोलीं !
रजनी-हासा
रजनी-गंधा
परित्यक्ता हैं,
आज सभी परित्यक्ता हैं !
.
ओ रजनी-हासा !
प्यासा.... प्यासा !
चिर साधों के उत्सव
आगत नव जीवन के
स्वागत-पर्व
सभी
गर्भ-क्षय-से पीड़क,
हीरक सपनों की रातें,
मधुजा-सी बातें

परित्यक्ता हैं !
.
मौन
मन-मैना,
बरसे नैना !
.
मधु-माधव बीत गया,
ओ ! मधुपायी
मधुरस रीत गया !
.
• •
(163) क्या पता था
.
छू रही थी रवि-किरण
ऊँचाइयों को,
सृष्टि की गहराइयों को,
नव-आलोक से परिपूर्ण था
जीवन-गगन !
पहने धरा थी
स्वर्ण के अनमोल अभिनव आभरण,
गूँजते थे हर दिशा में
हर्ष-गीतों के चरण !
.
क्या पता था —
एक दिन ऐसे अचानक मेघ छाएंगे
बिना कारण
गरज बिजली गिराएंगे !
.
और हम —

असह उर-वेदना ले
मूक भटकेंगे
अँधेरे में, अँधेरे में !
.
नियति लेगी छीन
भू-सौभाग्य,
विक्षत कर
महकते फूल !
आँचल में भरेगी निर्दयी,
हा, इस तरह रे धूल !
अन्तर में चुभाएगी
नुकीले शूल !
.
और हम —
अर्थी उठा विश्वास की
मस्तक झुकाये
शोक से बोझिल हृदय ले
अग्नि-लपटों को समर्पित कर
अकेले लौट आएंगे,
व जीवन भर
विवश हो दोहराएंगे
करुण गीतों के चरण !
.
• •
(164) राज़ क्या है ?
.
हवा सर्द है !
रात खामोश है
जिस तरह चुप तुम्हारे अधर !

.
बात क्या है ?
राज़ क्या है ?
कि जो सो गयी हर लहर !
.
दे रही नींद पहरा,
घिर गया तिमिर गहरा,
उठ रहा दर्द है !
हवा सर्द है !
.
• •
(165) अनाहूत स्थितियों से
.
जीवन दिया है
तो
प्यार भी दो !
प्यास दी है
रसधार भी दो !
.
जब दिया है रूप
आत्मा को
सुघड़ तन-शृंगार भी दो !
उर दिया है
भावना का ज्वार भी दो !
.
मत करो वंचित
सहज अनुभूतियों से
इस तरह —
जीवन कि जीना बोझ बन जाए,

सब उम्र कट जाए
बिन गीत गाए
स्नेह-सुषमा का
सुखद सावन सजाए !
.
ज्योति का आकाश
आँखों को दिया
तो
अनगिनत सपने सुहाने
झूलने दो !
दर्द आँहों से
तनिक तो
चेतना को भूलने दो !
.
मत कसो
मजबूरियों की रस्सियों से
इस तरह —
पल भर
फड़फड़ा भी जो न पाएँ
वासनाओं के विखंडित पंख !
अनपेक्षित घृणा की
कील मत ठोंको
धड़कते वक्ष पर !
अंगार मत फेंको
सरल आसक्त आँखों पर !
.
जीवन दिया है
तो

लेने दो
हर फूल की मधु गंध,
जीवन दिया है
तो
सोने दो
हर लता के अंक में निर्बन्ध !
.
• •
(166) प्रार्थना
.
अँधेरा दो
पराजय का अँधेरा दो
निराशा का सघन-गहरा अँधेरा दो
पर,
विजय की आस मत छीनो
सुबह की साँस मत छीनो
नये संसार के
सुख-साध्य सपनों के सहारे
करुण जीवन बिता लेंगे !
अभावों से भरा जीवन बिता लेंगे !
.
वंचना दो
प्रीत के हर प्रिय चरण पर वंचना दो
मृग-तृषा-सी वंचना दो
पर,
अधर के गीत मत छीनो
राग का संगीत मत छीनो
सुधा-धर कंठ से

ठर भावना-विश्वास धरती पर
कल्पनाओं के सहारे
विरस यौवन बिता लेंगे,
हर सजल सावन बिता लेंगे !
अकेला अनमना यौवन बिता लेंगे !
.
• •
(167) अविश्वसनीय
.
प्रेक्षागृह में
प्रेक्षक नहीं,
मात्र मैं हूँ !
मैं —
अभिनेता,
नायक !
.
जिसका जीवन
प्रहसन नहीं,
त्रासद.... शोकान्त !
.
मैं ही जीवन की
मुख्य-कथा का निर्माता
टूटे-स्वर से
गा....ता
समाधि गान !
जिसकी करुण तान
अनाकर्षक
रस विहीन !
.

मैं ही भोजक
भोज्य !
आदि... मध्य... अंत
विषाद सिक्त
नील तंतु से निर्मित,
बोझिल मंथर गति से विकसित !
.
पर,
मादक प्रकरी-सी
तुम कौन ?
रंभा ?
उर्वशी ?
एकरस कथानक में अचानक !
यह सब 'सहसा' है,
अनमिल
अस्वाभाविक है !
.
• •
(168) पुनर्जन्म
.
जीवन का आरम्भ :
फिर से।
उसमें सन्दर्भ न हो,
पूर्वा पर कोई संबंध न हो !
.
क्या वर्तमान को गत क्षण प्रदेय ?
जब दुष्कर पा लेना जीवन का प्रमेय ?
.
जीवन : नहीं पहेली ?

उसका अर्थ सरल हो,
उसकी भाषा प्रांजल हो,
उसमें वांछित
कोई अन्तर-कथा नहीं,
रिसते घावों की सोयी व्यथा नहीं !
.
जितना खोजोगे : भटकोगे,
जितनी संगति जोड़ोगे : उलझोगे !
.
आगत पर
बेचैनी और उदासी का दामन ?
आस्था के शीश महल पर
संदेहों के पाहन ?
नहीं, नहीं !
.
• •
(169) धरती का गीत
.
हमें तो माटी के कन-कन से मोह है
असम्भव, सचमुच, उसका क्षणिक बिछोह है,
निरंतर गाते हम उसके ही गीत हैं
हमें तो उसके अंग-अंग से प्रीत है !
.
• •
(170) दृष्टि
.
माना, हमने धरती से नाता जोड़ा है,
पर, चाँद-सितारों से भी प्यार न तोड़ा है,
सपनों की बातें करते हैं हम, पर उनको
सत्य बनाने का भी संकल्प न थोड़ा है !

.
• •
(171) कला-साधना
.
हर हृदय में
स्नेह की दो बूँद ढल जाएँ
कला की साधना है इसलिए !
.
गीत गाओ
मोम में पाषाण बदलेगा,
तप्त मरुथल में
तरल रस ज्वार मचलेगा !
गीत गाओ
शांत झंझावात होगा,
रात का साया
सुनहरा प्रात होगा !
.
गीत गाओ
मृत्यु की सुनसान घाटी में
नया जीवन-विहंगम चहचहाएगा !
मूक रोदन भी चकित हो
ज्योत्स्ना-सा मुसकराएगा !
.
हर हृदय में
जगमगाए दीप
महके मधु-सुरिभ चंदन
कला की अर्चना है इसलिए !
हर हृदय में
स्नेह की दो बूँद ढल जाएँ

कला की साधना है इसलिए !
.
गीत गाओ
स्वर्ग से सुंदर धरा होगी,
दूर मानव से जरा होगी,
देव होगा नर,
व नारी अप्सरा होगी !
.
गीत गाओ
त्रास्त जीवन में
सरस मधुमास आ जाए,
डाल पर, हर फूल पर
उल्लास छा जाए !
पुतलियों को
स्वप्न की सौगात आए !
.
गीत गाओ
विश्व-व्यापी तार पर झंकार कर !
प्रत्येक मानस डोल जाए
प्यार के अनमोल स्वर पर !
.
हर मनुज में
बोध हो सौन्दर्य का जाग्रत
कला की कामना है इसलिए !
हर हृदय में
स्नेह की दो बूँद ढल जाएँ
कला की साधना है इसलिए !
.
• •

(172) गाओ

.

गाओ कि जीवन गीत बन जाए !

.

हर क़दम पर आदमी मजबूर है,
हर रुपहला प्यार-सपना चूर है,
आँसुओं के सिन्धु में डूबा हुआ
आस-सूरज दूर, बेहद दूर है,
गाओ कि कण-कण मीत बन जाए !

.

हर तरफ़ छाया अँधेरा है घना,
हर हृदय हत, वेदना से है सना,
संकटों का मूक साया उम्र भर
क्या रहेगा शीश पर यों ही बना ?
गाओ, पराजय — जीत बन जाए !

.

साँस पर छायी विवशता की घुटन
जल रही है ज़िन्दगी भर कर जलन
विष भरे घन-रज कणों से है भरा
आदमी की चाहनाओं का गगन,
गाओ कि दुख संगीत बन जाए !

.

• •

(173) भूमिका

.

सुनहरी फ़सल के लिए
रसभरी ग़ज़ल के लिए
हृदय-भूमि को सींचना !

.

प्रिय अमिय-धरों के लिए

मधुरतम स्वरों के लिए
हृदय-तार को खींचना !
.
• •
(174) अंकुर
.
फोड़ धरती की कड़ी चट्टान को
ऊध्र्वगामी शक्ति का व्यक्तित्व
अंकुर फूटता है !
.
आँधियों के दृढ़ प्रहारों से
सतत संघर्ष रत
नव चेतना का
दिव्य अंकुर फूटता है !
.
सिर उठा
फैला भुजाएँ
जब गगन में झूमता है वह
अमंगल नाश का विश्वास सारा
टूटता है !
सृष्टि की जीवन-विरोधी भावनाओं का
उमड़ता वेग
धीरज
छूटता है !
.
अंकुरों की राह से
हट कर चलो !
अंकुरों की बाँह से
हटकर चलो !

अंकुरों को फैलने दो
धूप में
विस्तृत खुले आकाश में !
.
• •
(175) थमना कैसा ?
.
जीवन में थमना कैसा ?
.
गति ही चेतन जीवन है,
गति-मुक्त
मनुज का अस्तित्व नहीं,
गति ही जीवन,
ईप्सित बंधन है !
.
हर्ष-विषाद व निश्चय-भ्रम,
बिखरा-बिखरा दैनिक-क्रम,
जीवन की
स्वस्थ प्रखर गति का सूचक है !
जीवन में स्थिरता कैसी,
जमना कैसा ?
जीवन में थमना कैसा ?
.
जीवन बहता सोता है जल का,
इसमें तनिक विचार न होता
बीते कल का !
धारा है यह,
घहर-घहरकर उमड़ेगा ;
सावन-भादों के मेघों-सा

काल-पृष्ठ पर
रह-रह घुमड़ेगा !
.
बहते जाओ, बहते जाओ,
गिर-गिरकर
उठ-उठकर
पथ की निर्मम चोटों को
सहते जाओ,
.
गति-प्रेरक गीता कहते जाओ !
भूल कहीं भी जीवन में
रुककर रमना कैसा ?
जीवन में थमना कैसा ?
.
• •
(176) हिम्मत न हारो!
.
हिम्मत न हारो !
कंटकों के बीच मन-पाटल खिलेगा एक दिन,
हिम्मत न हारो !
.
यदि आँधियाँ आएँ तुम्हारे पास
उनसे खेल लो,
जितनी बड़ी चट्टान वे फेंकें तुम्हारी ओर
उसको झेल लो !
.
तुम तो जानते हो
आजकल बरसात के दिन हैं;
गगन में खलबली है,

दौर-दौरा है घटाओं का,
तुम्हारे सामने अस्तित्व हो उनका
सदाओं का !
.
लरजती बिजलियाँ;
माना,
तुम्हारे सामने हो खेल
आतिशबाज़ियाँ नाना !
निरंतर राह पर चलते रहोगे तो
तुम्हारा लक्ष्य तुमसे आ मिलेगा एक दिन !
हिम्मत न हारो !
कंटकों के बीच मन-पाटल खिलेगा एक दिन !
हिम्मत न हारो !
.
• •

.
मैं नहीं दुर्भाग्य के सम्मुख झुकूँगा
आज जीवन में हुआ असफल भले ही !
.
एक पल को साधना की भावना सोयी नहीं,
और जाऊँ हार, ऐसी बात भी कोई नहीं,
मैं नहीं सुनसान राहों पर थकूँगा
दूर, बेहद दूर हो मंज़िल भले ही !
.
आज छाया है अमावस-सा अँधेरा सब तरफ़,
पर, अभी कल मुसकराएगा सबेरा सब तरफ़,
मैं न मन की पंगु दुविधा में रुकूँगा
पास में चाहे न हो संबल भले ही !

.
• •
(178) व्यथा
.
तुम नये युग के तरुण हो,
है नहीं देता तुम्हें शोभा बहाना अश्रु
प्रिय की याद में,
या बेवफ़ाई में !
कि बदली घिर रही है,
वायु मंथर मधु बसंती बह रही है,
चाँदनी आकाश में छिटकी हुई है !
.
और तुम हो दूर प्रिय से !
या कि प्रिय ने है किया
विश्वासघात कठोर तुमसे !
.
सरल तुम भावुक हृदय के जीव हो,
दिल में तुम्हारे प्यार है,
अरमान हैं,
है चाहना सुख की,
नयी स्वर्णिम विहँसती ज़िन्दगी के स्वप्न हैं !
.
पर, आज चकनाचूर वे,
ज्यों गिर पड़ा हो हाथ से
पाषाण पर जा ताप-मापक-यंत्र,
बहते अश्रु पारे के सदृश,
मानो रहा ही अब नहीं
कोई तुम्हारा वश !
.

न सोचो
दीप बुझता जा रहा है,
और बीती याद का
तीखा, नुकीला शूल
चुभता जा रहा है !
ये कबूतर
जो कि छत पर मौन बैठे हैं
किसी की क्या कभी यों याद करते हैं ?
.
• •
(179) संकल्प-विकल्प
.

आज यह कैसी थकावट ?
कर रही प्रति अंग रग-रग को शिथिल !
.
मन अचेतन भाव-जड़ता पर गया रुक,
ये उनींदे शांत बोझिल नैन भी थक-से गये !
.
क्यों आज मेरे प्राण का
उच्छ्वास हलका हो रहा है,
गूँजते हैं क्यों नहीं स्वर व्योम में ?
.
पिघलता जा रहा विश्वास मन का
मोम-सा बन,
और भावी आश भी क्यों दूर तारा-सी
दृष्टि-पथ से हो रही ओझल ?
.
व जीवन का धरातल

धूल में कंटक छिपाये
राह मेरी कर रहा दुर्गम !
.
गगन की इन घहरती आँधियों से
आज क्यों यह दीप प्राणों का
उठा रह-रह सहम ?
.
रे सत्य है,
इतना न हो सकता कभी भ्रम !
भूल जाऊँ ?
या थकावट से शिथिल होकर
नींद की निस्पंद श्वासों की
अनेकों झाड़ियों में
स्वप्न की डोरी बनाकर
झूल लूँ ?
.
इस सत्य के सम्मुख
झुकाकर शीश अपना
आत्म-गति को
(रुक रही जो)
रोक लूँ ?
.
या
सत्य की हर चाल से
संघर्ष कर लूँ आत्मबल से आज ?
.
• •

.

लड़खड़ाते पाँव हैं, सूनी डगर
झूम आगे चल रहा हूँ मैं मगर !
.
चाँदनी नभ में सुखद फैली हुई,
दीपकों की राह में आभा नयी,
.
दूर हिलता वृक्ष पीपल का, पवन-
प्रति-झकोरे पर, विमूर्छित मूक मन !
.
झाँकता जिसमें नशीला चाँद है,
छा गया रे कौन-सा उन्माद है ?
.
आरती के स्वर, रहा घंटा घहर;
उठ रहीं प्रति बार क्षिप्रा में लहर !
.
पंथ पगडंडी बना मैं चल रहा
मार्ग का अणु-अणु बना संबल रहा !
.
औरतें गाती रही थीं आ जहाँ
जा रहा था एक मुर्दा भी वहाँ !
.
श्वान थोड़े-से पड़े थे भोंकते,
नालियों के पास भिक्षुक कोसते,
.
डालियों पर बैठ उल्लू बोलते,
दूत प्रतिपल ईश के जग डोलते !
.
साधुओं का है अखाड़ा पास ही
है जिन्हें परमात्मा विश्वास ही ?
.

और मैं आगे रहा हूँ चल उधर
जीर्ण कुटिया एक प्राणों की जिधर !
.
लड़खड़ाते पाँव हैं, सूनी डगर !
.
• •
(181) न रुकते चरण !
.
अँधेरी निराशा-निशा में
उषा की दमकती न आशा-किरण !
.
गगन में नहीं अब चमकते सितारे कहीं,
धरा के सभी दूर डूबे किनारे कहीं,
चला जा रहा, पर, सतत बेसहारे कहीं,
विहग उड़ हृदय के सभी आज हारे नहीं,
कठिन कंटकों से भरी राह
दुर्गम, कहीं, पर न रुकते चरण !
.
उगलती चली पंथ की हर कहानी गरल,
मिटाती चलीं आँधियाँ सब सुरक्षित महल,
सतत, पर प्रगतिवाह-उन्मुक्त-जीवन-सबल,
हुई साधना-प्राण की मम न किंचित विफल,
विरोधी अमंगल समय की
सुलगती प्रखरतम बुझायी जलन !
.
चमक कर, गरज कर डरातीं घटाएँ अगम,
निरंतर उलझती गयी हर डगर बन विषम,
कि बढ़ता गया घिर धुआँ-सा तिमिर हर क़दम,
व बुझते गये राह-संकेत-दीपक सहम,

प्रलय रात, पर, आज भय से
कहीं डबडबाए न मेरे नयन !
.
• •
(182) सहारा
.
नहीं साथ मैं चाहता हूँ तुम्हारा,
भले ही मिटे ज़िन्दगी का सहारा !
.
जिये यदि किसी की दया माँग
तो क्या जिये ?
कभी भूल चिंता करूंगा न
अपने लिये,
.
ज़रा भी न अफ़सोस, चाहे बुझे यह
गगन में चमकता अकेला सितारा !
.
हँसूंगा न जीवित रहूंगा
सफलता बिना,
निखरता मनुज का न जीवन
विफलता बिना,
.
भरोसा बड़ा ही मुझे है कि बहती
हुई यह रुकेगी नहीं प्राण-धारा !
.
• •
(183) जीवन नहीं !
.
जीवन नहीं, जीवन नहीं !
.
सौभाग्य ही केवल न मन की साध है,

रोना यहाँ दुर्भाग्य पर अपराध है,
यह भूलना —
क्षण आपदाओं के महान भविष्य के आभास;
यदि इतना नहीं विश्वास
तो ज़िन्दगी का वह कभी
दर्शन नहीं, दर्शन नहीं !
जीवन नहीं, जीवन नहीं !
.
सपने नयन-आकाश में छाते रहें,
अपने लिए ही गीत हम गाते रहें,
यह भूलना —
परमार्थ, सेवा-भावना ही मानवी आधार !
यदि इतना नहीं स्वीकार
तो श्वास तेरी बद्ध, उर
धड़कन नहीं, धड़कन नहीं !
जीवन नहीं, जीवन नहीं !
.
उद्यान में केवल न खिलते फूल हैं,
उड़ती हुई भी प्रति चरण पर धूल है,
यह भूलना —
अवरुद्ध बंधन-ग्रस्त जीवन से सदा विद्रोह,
यदि निज प्राण से है मोह
तो शक्ति का उन्माद क्या
यौवन नहीं, यौवन नहीं !
जीवन नहीं, जीवन नहीं !
.
• •
(184) हमें यह पता है —
.

रुकावट हटाते हुए हम चलेंगे,
अँधेरा मिटाते हुए हम चलेंगे,
हमें यह पता है —
उजेले में बिजली कभी चमचमाती नहीं है !
.
सजग रह सतत आज बढ़ते रहेंगे,
इमारत नयी एक गढ़ते रहेंगे,
हमें यह पता है —
जवानी मनुज की कभी लड़खड़ाती नहीं है !
.
ठिठक कर रुकेंगी विरोधी हवाएँ,
फिसल कर गिरेंगी सभी आपदाएँ,
हमें यह पता है —
कि हिम्मत की साँसें कभी व्यर्थ जाती नहीं हैं !
.
• •
(185) साथी
.
जो जीवन की विपदाओं को
हँस-हँस झेल लिया करते हैं —
केवल वे मेरे साथी हैं !
.
शूल-ग्रस्त, बीहड़, पथरीली
शून्य डगर पर बड़ा अँधेरा,
पर, चलते, नयनों में भर जो
जगमग करता नया सबेरा,
निर्भय बन जीवन और मरण
से जो खेल किया करते हैं —
केवल वे मेरे साथी हैं !

.
जब सिर पर क्रोधित हो-हो कर
गरजा करतीं तेज हवाएँ,
हो जातीं सभी विफल, भावी
की जब आशा-आकांक्षाएँ,
तब जो उस घोर निराशा में
पापड़ बेल लिया करते हैं —
केवल वे मेरे साथी हैं !
.
बाधाओं से टकरा क्षण-भर
जो सीख न पाये हैं रुकना,
मंज़िल पा जाने से पहले
जो जान न पाये हैं थकना,
जीवन भर मन की तरुणाई
से जो मेल किया करते हैं —
केवल वे मेरे साथी हैं !
.
• •
(186) यह नहीं मंज़िल...
.
यह नहीं मंज़िल तुम्हारी !
.
और चलना है तुम्हें,
और जलना है तुम्हें,
ज़िन्दगी की राह पर करना अभी संघर्ष भारी !
.
और पीना है गरल,
है तभी जीना सफल,
यह तुम्हारी ही परख की आ गयी है आज बारी !
.

सामने तूफ़ान है,
पर, बड़ा इंसान है,
पैर से जिसने मिटा दी संकटों की सृष्टि सारी !
.
यह मुझे विश्वास है,
बोलता इतिहास है,
मैं वहीं हूँ, काँपती जिससे कि काया ध्वंसकारी !
यह नहीं मंज़िल तुम्हारी !
.
• •
(187) स्वर-साधना
.
सतत आश-विश्वास के स्वर
समय-बीन पर मैं बजाता रहा हूँ !
.
डगर पर घिरा है अँधेरा सघन,
भयावह निखिल आज वातावरण,
घटाएँ घिरीं और गरजा गगन,
मरण की चिता पर विजय-गान गाता रहा हूँ !
.
समेटो मनुज प्राण-साहस अमर,
अनल में तपो जो लगा है प्रखर,
जवानी बड़ी जायगी यों निखर,
सुनाकर सबल स्वर जगत को जगाता रहा हूँ !
.
• •
(188) प्राण-दीप
.
रात भर जलता रहा यह दीप प्राणों का अकेला !
.

वेग लेकर नाश का आया पवन था,
शक्ति के उन्माद में गरजा गगन था,
दीप, पर, अविराम जलने में मगन था,
आ नहीं जब तक गयी संसार में नव-स्वर्ण-बेला !
.
रात भर हँस-हँस सतत जलता रहा है,
आँधियों के बीच भी पलता रहा है,
आततायी का अहम् दलता रहा है,
मूक, हत, भयभीत मानव को दिया जगमग उजेला !
.
• •
(189) नयी किरणें
.
फटते जाते
हटते जाते
सदियों की छायी
मूक उदासी के बादल !
.
मानों रूई के हलके
श्वेत बगूले फूले-फूले
आँधी में उड़-उड़ जाते हों !
.
मेरे मन की जड़ता के,
तम के, घोर निराशा के
बेछोर समाये उमड़े बादल
उर-नभ में छितराये जाते हैं !
.
जीवन की तमस-निशा के बाद
दिवाकर की किरणों में

बोल रहे खग,
खोल रहे अलसाए दृग !
.
भाव-लहरियों से पूरित सरल हृदय
दुख-वीणा के स्वर लय !
.
प्रतिध्वनि सुनता हूँ
आज नये जीवन की,
अंतर की अभिनव धड़कन की !
.
युग-युग के सोये भाव मधुर सब
धीरे-धीरे जाग रहे हैं,
कर्कशता के बर्बर प्रहरी
उलटे पैरों भाग रहे हैं !
.
उठता है अब भावी का परदा,
जिसकी पृष्ठभूमि पर
गत-जीवन के चित्र
अनेकों टूटे-टूटे,
बेजोड़, अधूरे, धुँधले
देते हैं साफ़ दिखायी !
.
इस परिवर्तन को मुक्त बधाई!
.
जिसने शिथिल-शिराओं को
नव-तरुणाई की ज्वाला दी,
जीवन को जयमाला दी !
.

.
ऐसे छोटे-मोटे तूफ़ान
हमारे जीवन में
अक्सर आते रहते हैं !
सिर के ऊपर,
दाएँ-बाएँ
मँडराते रहते हैं !
हर रोज़
सुबह क्या शाम
कभी भी छाते रहते हैं !
हम तूफ़ानों में पैदा होने वाले
तूफ़ानों में बढ़ने वाले
तूफ़ानी-जीवन के प्रेमी हैं।
क्योंकि हमारा अनुभव है —
तूफ़ानों से संकट के आधार
धरा की शैया पर
डर कर सो जाते हैं,
जैसे कोई डरपोक अँधेरी निशि में
बिल्ली की आहट को चोर समझकर
कम्बल में मुँह ढक कर सो जाता है,
उसकी घिग्घी बँध जाती है
वैसे ही संकट मुर्दा हो जाते हैं।
.
तूफ़ान कभी
कमज़ोरों का साथ नहीं देता है,
तूफ़ानी धरती पर
मज़बूत, साहसी इंसान जनमते हैं !
मोटे-मोटे, ऊँचे-ऊँचे,

पत्तों-फूलों वाले
पेड़ पनपते हैं !
.
आओ,
हम सब ऐसे तूफ़ानों की
युग-पथ की उस पुलिया पर हो एकत्रा
प्रतीक्षा में बैठें,
उनके स्वागत को बैठें।
.
जिससे आज सभी के जीवन की
जर्जरता, धोखे की टटिया,
मिथ्या विश्वासों की गिरती दीवारें,
युग-युग का संचित
रीति-रिवाज़ों का
सड़ा-गला कूड़ा-करकट
नभ में काफ़ी ऊँचे उड़ जाये !
और सभी के मन की धरती
साफ़ मुलायम
दुख-दर्द समझने वाली हो जाये !
पानी पड़ते ही
कोमल-कोमल गदकारे
पौधों से ढक जाये,
जिस-पर श्रम से थककर,
सोने को मन कर-कर आये !
.
फिर चाहे तूफ़ान हजारों
गरज-गरज कर गुज़रें,
क्योंकि —

बड़ी ही बेफ़िक्री का आलम होगा,
ऐसा तूफ़ानी सुख
दुनिया के किस आकर्षण से कम होगा ?
.
तो जर्जरता का मोह मिटा दो,
गढ़े-पुराने इतिहासों की
पुनरावृत्ति का स्वप्न हटा दो !
नया बनाओ, नया उगाओ !
जो तूफ़ानों को झेल सके,
उनकी बढ़ती काया को
खेल-खेल में ठेल सके !
.
• •
(191) परिचय
.
स्नेह की मधु-धार हूँ मैं !
.
पास जो आये न मेरे,
दूर का परिचय रखा बस,
भावना से हीन समझा
की उपेक्षा व्यंग्य से हँस,
जान पाये वे भला कब
प्रेम-पारावार हूँ मैं !
स्नेह की मधु-धार हूँ मैं !
.
देह निर्बल देखकर जो
एक उड़ती-सी नज़र से,
फेरकर मुख, हो गये उस
क्षण अलग मेरी डगर से,

जान पाये वे भला कब
शक्ति का संसार हूँ मैं !
स्नेह की मधु-धार हूँ मैं !

.

मुसकराया मैं न किंचित;
क्योंकि था अति क्षुब्ध-जीवन,
इसलिये जो लोग मुझको
हैं समझते मूक पाहन,
जान पाये वे भला कब
बीन की झंकार हूँ मैं !
स्नेह की मधु-धार हूँ मैं !

.

कूल ही पर छोड़ मुझको
चल पड़े जो नाव लेकर,
ज्वार-लहरों में गये फँस,
अब गरजता सिंधु जिन पर,
जान पाये वे भला कब
मुक्ति की पतवार हूँ मैं !
स्नेह की मधु-धार हूँ मैं !

.

• •

(192) नयी ज़िन्दगी

.

(रंगमंच पर एक युवक, जिसके रूखे केशों की लटें मुख के आस-पास गिरी हुई हैं, दर्द भरी आवाज़ में गाता है। मंच पर अँधेरा है, केवल युवक पर पीली-पीली रोशनी पड़ रही है। जैसे ही वह गान प्रारम्भ करता है, पर्दे के पीछे से हल्की-हल्की वाद्य-ध्वनि होती है ; जो उसकी रागिनी से मेल खाती हुई है —

.

कितनी बेबसी के बीच गुज़री जा रही है ज़िन्दगी !

.

हमेशा एक-से दिन, एक-सी रातें,
वही जीवित अभावों की सड़ी बातें,
हृदय पर कर रहीं आघात,
कि कितनी दूर है बरसात ?
प्राणों का अधूरा गीत रह-रह गा रही है ज़िन्दगी !
कितनी बेबसी के बीच गुज़री जा रही है ज़िन्दगी !

.

वही सपने पुराने कर रहे हैं छल,
वही कंपन, वही धड़कन, वही हलचल,
हृदय पर कर रही अधिकार,
कि कितनी दूर नव-संसार ?
बारम्बार जीवन के वही क्षण पा रही है ज़िन्दगी !
कितनी बेबसी के बीच गुज़री जा रही है ज़िन्दगी !

.

(पर्दे के पीछे से वाद्य-ध्वनि ज़रा कुछ तेज़ हो जाती है और साथ में नारी-स्वर भी उसी लय में सुनायी देने लगता है जो अभी अस्पष्ट और धीमा है। युवक का गान चलता रहता है —

.

बड़ी सूखी हवाएँ आसमानों पर,
चलीं आवाज़ करतीं आशियानों पर,
हृदय में काँपता विश्वास,
कि कितनी दूर है मधुमास ?
पतझर बीच हलकी साँस ले मुरझा रही है ज़िन्दगी !
कितनी बेबसी के बीच गुज़री जा रही है ज़िन्दगी !

.

(वाद्य-ध्वनि और धीमी-धीमी आवाज़ के साथ, अब पास आते हुए नूपुरों की झनकार भी सुनायी देती है। युवक का स्वर कुछ धीमा पड़ जाता है, पर गान का क्रम बिना टूटे चलता रहता है —

.

थकावट के नशे से चूर सारा तन,
बड़ा दुर्बल, बड़ा मजबूर, हारा मन,

हृदय में रह गये अरमान,
कि कितनी दूर है मुसकान ?
छाया हड्डियों की बन अकेली छा रही है ज़िन्दगी !
कितनी बेबसी के बीच गुज़री जा रही है ज़िन्दगी !

.

(मंच पर एक दमकती हुई नारी - नयी ज़िन्दगी की तसवीर बन कर नृत्य करती आती है ; जिसके तन पर रंगीन प्रकाश पड़ रहा है। युवक चकित होकर उसकी ओर देखता है, उसका गान रुक जाता है। इसी समय पृष्ठभूमि का यह स्वर प्रखर हो उठता है —

.

भविष्यत् विश्व का नव-लक्ष्य सुन्दर है,
मगर अभिनव दिशा का पथ न बेहतर है,
बिछे कंटक कठिन, दुर्दम ;
क़दम पर गिर रहे हरदम,
कितनी आफ़तों को चीर हँसती आ रही है ज़िन्दगी !
गहरे इस अँधेरे में किरन बरसा रही है ज़िन्दगी !

.

('हँसती आ रही...' शब्दों पर नारी का चेहरा मुसकान से भर जाता है। युवक पृष्ठभूमि के स्वरों को दोहराता हुआ 'नयी ज़िन्दगी' की ओर बढ़ता है। उसके रुखे केश हवा में उड़ने लगते हैं और 'नयी ज़िन्दगी' उसका हाथ पकड़ लेती है। एक क्षण तक वाद्य-ध्वनि, नूपुरों की झनकार और गीत के स्वर गूँजते रहते हैं।)

.

• •

(193) गन्तव्य

.

यह जीवन का गन्तव्य नहीं !

.

निष्फल क्षय-ग्रस्त कराहों का,
इन सूनी-सूनी राहों का,
असफल जीवन की आहों का,
स्वप्न-निमीलित, मोह-ग्रसित यह
जाग्रत-उर का मन्तव्य नहीं !

.
वैयक्तिक स्वार्थों पर निर्मित ,
आत्म-तुष्टि के साधन सीमित,
पथ पार्थिव सुख पर कर लक्षित,
जन-मन-रागों से दूर कहीं
मानवता का भवितव्य नहीं !
.
बीते युग पर पछताने का,
या याद पुरानी गाने का,
है ध्येय न आज ज़माने का,
युग की वाणी से रही विमुख
एकांत-कला क्या भव्य कहीं ?
.
• •
(194) जब-जब
.
जब-जब बढ़ीं क्रुद्ध लहरें गरजती हुईं
तब-तब चलायी थी नौका,
समुन्दर चकित था !
.
जब-जब गिरीं बिजलियाँ ये लरजती हुईं
तब-तब बढ़ाये क़दम दृढ़,
निलय भी नमित था !
.
• •
(195) विश्वास है !
.
विश्वास है —
एक दिन काली घटाओं से घिरा आकाश
खुल कर ही रहेगा !

.
धूप के दिन
एक क्या अगणित
धरा पर
ज्योति में डूबी
सरल उजली हँसी हँसते हुए
आकर रहेंगे !
.
तुम रुको मत
इस बरसते कल्प में जीवन-प्रवासी,
भीग जाने का कहीं भय
रोक ले गति को न,
तुम इतना करो विश्वास—
आगे लाल-किरणें राह में
बिखरी मिलेंगी !
सूख जाएगा सभी जल
आज जो प्रति अंग को कंपित किये है,
हार जाएगा
सतत गतिवान धारा से
विरोधी मेघ
जो जल-कण अमित संचित किये है !
.
तम भरी गहरी घटाओं के तले
है टिमटिमाता दीप
मानव के अमर विश्वास का !
पर, जो अँधेरे की सघनता में
कहीं खो-सा गया है;
ढूँढ उसको तुम

जलाओ दीप अपना,
एक से अगणित जलेंगे दीप जगमग !
जो तमिस्रा भंग कर
नव स्वर्ण-पथ-रचना करेंगे !
क्योंकि
भावी विश्व के विश्वास की
लौ जल रही है !
.
इसलिए विश्वास है —
छायी हुई संध्या समय संक्रांति की
धूमिल अँधेरी पार कर
नव लाल जीवन का सबेरा
व्योम से लाकर रहेगी !
.
• •
(196) बहुत हुआ बस रहने दो
.
दीख रही हैं भरी घृणा से
आज तुम्हारी आँखें,
चेहरे की सिहरन बतलाती है
घोर उपेक्षा के भावों को;
और तुम्हारी मुक्त हँसी में
कितना व्यंग्य भरा है,
कितना अपमान भरा है !
.
बातों का आशय इतना संशयग्रस्त
कि बिलकुल भी पता नहीं पड़ पाता
सत्य रहस्य तुम्हारा
मेरे प्रति इस निर्मम आकर्षण का !

जिससे मैं बेचैन तड़प उठता हूँ
मूक सिनेमा के चित्रों के पात्रों के समान
होंठ उठाकर रह जाता हूँ मौन !
कंठ से निकले स्वर
अन्दर की अन्दर पी जाता हूँ,
सुन लेता हूँ हर उलटी-सीधी बातें।
.
पर, मन भर-भर आता है —
कि कौन हो तुम जो मेरे चुप रहने पर
आपत्ति करो ?
नाहक मुझको तंग करो ?
उकसाओ, मैं बोलूँ
और तुम्हारी बेहूदी व्यर्थ अनर्गल
बातों का उत्तर दूँ ?
जिनका अर्थ नहीं कोई,
जो रुचि से मेल नहीं खातीं,
जिनको सुनकर भाव-लहरियाँ
न हृदय में आ टकरातीं !
.
बहुत हुआ बस रहने दो —
मत समझो इस चुप्पी का अर्थ
कि मैं निरा मूर्ख बुद्धि-हीन हूँ,
मत समझो तन निर्बल है तो
मन से भी शिथिल दीन हूँ !
मेरे उर का प्याला
लबरेज़ भरा है जीवन-रस से,
मेरे अन्दर की हर धमनी में
नूतन रक्त दौड़ रहा है

बिजली की रेल सरीखा !
मेरी आँखों में
स्नेह भरा है सागर-सा,
आत्मा में
दृढ़ता, बल, स्वाभिमान, ओज भरा है
सूरज की ज्वाला-सा अक्षय !
जिसको
परिवर्तन औ' षड्यंत्र
मिटाने में क़ामयाब हो न सकेंगे !
जिसकी
युग-युग से अविरल जलती लौ की
आब म्लान न हो पाएगी;
चाहे एक बड़े पैमाने पर
असमय टूट पड़ें
अगणित सूर्य-ग्रहण !
निश्चय होगा प्रति अंग दहन।
.
मत जूझो, मत पूछो आगे
बहुत हुआ बस रहने दो !
मेरी जीवन-धारा को
निज पथ पर बहने दो !
.
• •
(197) मन
.
मोर-सा मन
फूल-सा तन
उल्लसित पुलकित

सरल
हो स्नेहमय
मदमत्त सुख की पा हिलोरें
तप्त-अन्तर-उष्णता भंगी बयारें
हो उठा चंचल
कि देखे जब गगन में
कृष्णवर्णी घोर 'निम्बस' मेघ !
सविता की
प्रखरतम रश्मियों को ढक लिया
मानों विजन मरुथल सहारा से
उठी है धूल
आँधी रेत की
छूने गगन की सरहदें !
.
उत्कर्ष !
मेरी हड्डियों का,
ख़ून का
लघु पावभर के बोझ का
कुछ फड़फड़ाती नस लिए
अंतर उठा रे
हर्ष से-उल्लास से हिल-डोल,
मानो बर्फ़ से — कोई
हिमालय के शिखर पर
बद्ध शीतल झील सुंदर
फट पड़ी हो,
खिल पड़ी हो
दूध-सी !
.

• •

(198) कौन से सपने

.

कौन से सपने
लगे अपने
निरन्तर
साधना साकार करने जो
हृदय तन से लगे तपने ?
अरे मन !
बोल तो रे
कौन-से सपने ?
भर रहे हैं शक्ति ऐसी —
दे रही जो
प्रेरणा, गति, चेतना,
घन फट रहे
औ' उड़ रही है वेदना !
उल्लास की अविरल उमंगें
उर-समुन्दर की तरंगें
उठ रही हैं, गिर रही हैं!

.

और मुखड़े पर
नयी ही आज
रेखाएँ दिखाई दे रही हैं !
कौन-सा सुख-भाव वर है
सुघर, सुन्दर, अमर जो श्रेष्ठतर है,
हो गया हलका
कि जिससे बोझ जीवन का
युगों की कामना का चित्रा भी रंगीन

अन्तर-दाह शीतल लीन ?

.

• •

(199) निशा का युग

.

अंधकार में डूबा हुआ
घिरा संसार,
समस्त
नयन की सीमा तक
गहन अंधकार
बेछोर घोर !

.

ग्रस्त सभी
लघु-क्षुद्र वस्तुएँ, विशाल प्रतिमाएँ
शिव सुंदर सत्य सार
घन अंधकार !
स्वच्छ नये जीवन से उभरा स्वस्थ सार
औ' सब अशिव, असुंदर, असत्य भार
उखड़ा जीर्ण निर्जीव भार !
सड़कें, मकान, पशु-पक्षी,
घास, पेड़, धूसरित मैदान,
मनुज, रंगीन मेघ,
झिलमिल असंख्य तारक;
पार्थिक संचय
घन अंधकार लय।
मानों जग को शव समझ
मूक ठंडे दिल से
अदृश-शक्ति ने बिछा दिया हो

काला ला कफ़न !
और जिसके भीतर
जानदार देह तड़प उठती हो
बार-बार,
रह-रह
श्वास-पंथ के लिए छिद्र एक पाने !
.
पथ-हारा मन
भूला-भटका थकित-तृषित
खोज रहा अभिनव आलोक
शोक में डूबा हुआ
जीवन का अभिलाषी
सहम गया
चारों ओर देख अंध-कूप !
.
गतिरोध ?
नहीं,
है शाश्वत इसका
मानव-गति से विरोध,
मानव तो
गतिशील, नित्य अभिनव, परिवर्तित
उसके जीवन का है सत्य यही
क्या उसकी स्वाभाविक गति
रुकी कहीं ?
उसकी छाती पर से
लोहे के इंजन जैसे अगणित
सघन-निशा युग ढल जाएंगे !
सहन किये हैं उसने

बर्फ़ीले युग
आँधी भूकम्पों के युग
ज्वाला के युग,
भयभीत न हो !
घन अंधकार
अरे मिलेगी, अरे मिलेगी
प्रकाश की नयी किरण
भर कर उर में
ज्योतिर्मय जग की आश
अटल विश्वास !
नहीं मन हार
कभी मत हार
माना फैला
घन अंधकार !

अँधेरा है, अँधेरा है !
कि चारों ओर जीवन में
निविड़ तम का बसेरा है !
कि जिसने सब दिशाओं को
कुटिल भय पाश में भर
मौन घेरा है !
दिखाई कुछ नहीं देता
पलक की नाव मेरी लय
सघन-तम-सिंन्धु में !
देखा क्षितिज में दूर तक

पर, कुछ न सूझा
और भी गहरा उमड़कर तम
धुआँ-सा बन
कड़कते बादलों-सा छा
हृदय में कर उठा चीत्कार -
छल, रंगीन यह संसार !
धोखा है कि धोखा है !
सनातन
प्राण का अंतिम बसेरा ही
अँधेरा है !
विवश हो
काँपता मन, काँपता जीवन
जटिल हो बढ़ रही उलझन,
अँधेरा है, अँधेरा है !
.
पर, बह रहा
अविराम जीवन-स्रोत
अनदेखा किये तम
सामने,
जिसमें छिपी हैं
सर्वभक्षक यातनाएँ घोर
चारों ओर !
संशय है; अधूरा ज्ञान है।
.
पर, बह रहा
जीवन सबल झरना;
कि किंचित सोचना रुकना
बुरा होगा यहाँ वरना,

निमिष भर को थकित होकर
अँधेरे से चकित होकर
अशिव के सामने झुकना
बुरा होगा यहाँ वरना !
ज़रा भी ठोकरों से हिल
अवनि पर एक पल झुकना
गिरा देगा,
तुम्हारी बाहुओं का बल
अथक संबल
शिथिल होकर
भयावह काल के सम्मुख
अँधेरे में सदा को
लुप्त हो मिट जाएगा।
मात्रा जीवन-शक्ति
अंतर-चेतना से
रह सकेगा मौन
दृढ़ निष्कंप
फैले इस अँधेरे में,
तुम्हारी साधना का दीप,
वांछित कामना का दीप !
.
• •
(201) चाह
.
मेरी भावनाओं की अगर तसवीर बन जाये
तो खुशहाल; उजड़े विश्व की तक़दीर बन जाये !
.
फूलों से मुहब्बत की, बहुत चाहा खिले उपवन

पर, पतझर-विजन की धूल में आया कहाँ जीवन ?
.
मंगल कल्पनाओं में ग्रहण धुँधला समाया जो,
नूतन धारणाओं पर पुराना ज़ंग छाया जो,
.
कर अवरुद्ध मेरी ज़िन्दगी की राह, बन पत्थर
काले रंग जैसा दूर सूने व्योम में भर-भर,
.
मुझको रोक, जाने क्या नयन में घोल देता है,
'हो सरहद्द में मेरी' — कभी यह बोल लेता है !
.
अभिनव रोशनी का सनसनाता तीर आ जाये
तो युग-वेदना में हर्ष सुख का नीर आ जाये !
.
मेरी भावनाओं की अगर तसवीर बन जाये
तो खुशहाल; उजड़े विश्व की तक़दीर बन जाये !
.
• •
(202) सोओ नहीं
.
सोओ नहीं, सोओ नहीं !
.
यह रात है दुख से भरी,
इस रात डूबेगी तरी,
तुम बाहुओं में शक्ति भर
कर जागते निशि भर रहो !
इंसान हो तो भीत जीवन में कभी
होओ नहीं, होओ नहीं !
.
यह रात काली है बड़ी,

पथ पर भयानकता जड़ी
तुम ज्वाल हाथों में लिए
आवाज़ यह करते रहो —
अवसर प्रलय संगर प्रबल तुम भूलकर
खोओ नहीं, खोओ नहीं !
.
• •
(203) स्थितियाँ और द्वन्द्व
.
निश्चिंत भी, भयभीत भी !
.
यह ज़िन्दगी जब दाँव पर,
संघर्ष है प्रति पाँव पर,
नव भैरवी भी बज रही,
रुकना न सम्भव है कहीं
है हार भी औ' जीत भी !
निश्चिन्त भी, भयभीत भी !
.
हम सुन रहे हैं राग सब
अनुराग और विराग सब
कोई बुलाता — लौट आ,
कोई सजाता कह, 'विदा !'
रोदन करुण भी, गीत भी !
निश्चिन्त भी, भयभीत भी !
.
शिव में अशिव आभास भी,
छलना जहाँ — विश्वास भी,
अभिशाप भी वरदान है,
मिट्टी निरीह महान है !

अपवित्र और पुनीत भी !
निश्चिन्त भी, भयभीत भी !

.

ललकारता है कौन यह ?
पुचकारता है कौन यह ?
मानव विरोधी द्वन्द्व में,
मानव सदा आनन्द में !
यह शत्रु भी है मीत भी !
निश्चिन्त भी, भयभीत भी !

.

• •

(204) कहाँ अवकाश ?

.

हमको कहाँ अवकाश है ?

.

जब मौत से हम लड़ रहे,
प्रतिपल प्रगति कर बढ़ रहे,
ये राह के कंटक सभी
लो धूल में अब गड़ रहे,
करना अँधेरे का हमें बढ़कर अभी ही नाश है !

.

हमने न देखे शूल भी,
हमने न देखी धूल भी,
हमने न देखे राह के
हँसते हुए मधु फूल भी,
हमने न जाना प्यार क्या औ' मोह का क्या पाश है!

.

हम हैं नहीं जो कल रहे,
हम चाल अपनी चल रहे,

क्या हार में, क्या जीत में
हम एक-से प्रतिपल रहे,
दुनिया बदलने के लिए अभिनव अटल विश्वास है !
.
• •
(205) गन्तव्य की ओर
.
ध्येय पहुँचने की तैयारी !
.
कितना बीहड़ दुर्गम रे पथ,
उलझ-उलझ जाता जीवन-रथ,
पर, रोक नहीं सकती मेरी गति को कोई भी लाचारी !
.
माना झंझा मुझको घेरे,
पर, चरण कहाँ डगमग मेरे ?
किंचित न कभी विपदाओं के सम्मुख मैंने हिम्मत हारी !
.
इस जीवन में कितनी हलचल,
बिखरा मिलता है गरल-गरल,
साधन हीना, संबल हीना, पर संघर्ष किये हैं भारी !
.
इस पथ पर चलना बड़ा कठिन,
इस पथ पर जलना बड़ा कठिन,
जो इस पथ पर टिक पाया, वह केवल जीने का अधिकारी !
.
• •
(206) साधना
.
आशा में घोर निराशा को आज बदलना सीख रहा हूँ !
.
दुख की निर्मम बदली में यह दीप जलेगा कब तक मेरा,

मौन बनी सूनी कुटिया में प्यार पलेगा कब तक मेरा ?
आते हैं उन्मत्त बवंडर, पागल बन तूफ़ान भयंकर,
रोक सका क्या ? बुझने का क्षण और टलेगा कब तक मेरा ?
तीव्र झकोरों में झंझा के पल-पल जलना सीख रहा हूँ !
.
कितने ही अरमान दबाए, नव-जीवन की प्यास लिये हूँ,
भूला-भटका, अनजाना-सा आँसू का इतिहास लिये हूँ,
अपने छोटे-से जीवन में अविचल साहस-धैर्य बँधाए,
मिटी हुई अभिलाषाओं में मिलने का विश्वास लिये हूँ,
शून्य डगर पर मैं जीवन की गिर-गिर चलना सीख रहा हूँ!
.
मत बोलो मैं आज अकेला स्वर्ग बसाने को जाता हूँ,
मौन-साधना से अंतर को आज जगाने को जाता हूँ,
रज-कण से ले उन्नत भूधर तक सुन कंपति हो जाएंगे;
अपने आहत मन को फिर से आज उठाने को जाता हूँ,
निर्मम जग के भारी संघर्षों में पलना सीख रहा हूँ !
.
\मत समझो मुझमें ज्वालाओं का भीषण विस्फोट नहीं है,
तूफ़ानों के बीच भँवर में आँचल तक की ओट नहीं है,
मत समझो, अगणित उच्छ्वासों का भी मूल्य नहीं कुछ मेरा
कौन जानता ? इस अंतर में असफलता की चोट नहीं है,
दुर्गम-बीहड़ जीवन-पथ के कंटक दलना सीख रहा हूँ !
.
• •
(207) स्नेह-सुधा-जल....
.
स्नेह-सुधा-जल बरसा दूंगा, टूटी-फूटी दीवारों में !
.
मैं सुन्दर विश्व सजा दूंगा,

मैं सुखमय स्वर्ग बसा दूंगा,
जीवन-संगीत सुना दूंगा,
हृद्-पीड़क शत-शत बंधन में, जकड़े युग के प्राचीरों में !
.
नृत्य मनोहर रुनझुन-रुनझुन,
गुंजित कर संसृति का कण-कण,
प्राणों में भर जीवन-धड़कन,
सरगम का मधु-स्वर भर दूंगा काली-काली ज़ंजीरों में !
.
जन-उर में द्रोह उठा दूंगा,
यौवन का तेज जगा दूंगा,
उन्नति की राह बता दूंगा,
मूक अभावों के जीवन में, घोर निराशा में, हारों में !
.
• •
(208) जीवन-पथ के राही से
.
बंधनों में, हार में रोना नहीं, रोना नहीं !
.
राह है यह ज़िन्दगी की एक पल रुकना न होगा,
देख सीमाहीन पथ को बीच में थकना न होगा,
ज्वार उठता हो उदधि में, मृत्यु-मुख में प्राण जाएँ,
गाज गिरती हो अवनि पर या दहलती हों दिशाएँ,
पर, हृदय-साहस कभी खोना नहीं, खोना नहीं !
.
हो अँधेरी रात चाहे, घोर गर्जन हो प्रलय का,
घेर ले झंझा भयानक, नृत्य हो चाहे अनय का,
मानकर चलना कि साथी हैं सभी झोंके भयंकर
ले चलेंगे पार फर-फर व्योम-पथ से जो उड़ा कर,

एक पल भी भय-ग्रसित होना नहीं, होना नहीं !

.

• •

(209) संघर्ष

.

छाया सघन अँधेरा पथ पर
लगता एकाकीपन दूभर,
झंझा के उन्मत्त प्रहारों से
होता प्रखर विध्वंसक स्वर,
नव बल संचित हो प्राणों में
संघर्ष प्रकृति से नया-नया!

.

मंज़िल है बेहद दूर अभी
और अपरिचित मार्ग पड़ा है,
लक्ष्य ओर प्रेरित चरणों का
गतिमय संयम बड़ा कड़ा है,
राह विषम, प्रति निमिष मनुज का
संघर्ष प्रकृति से नया-नया !

.

शून्य गगन में प्रलय-बाढ़ से
घिरते जाते बादल के दल,
प्रत्यावर्तन दुर्बलता है
चलना ही है जीवन केवल,
घन गर्जन, चपला नर्तन है
संघर्ष प्रकृति से नया-नया !

.

• •

(210) दीप

.

दीप, तुम्हें तो जलना होगा !

.
नभ के अगणित टिमटिम तारे,
जग के कितने जीवन-प्यारे,
बारी-बारी से सो जाएंगे,
सपनों का संसार बसाए
दीप, तुम्हें पर जलना होगा !
.
तूफ़ान मचेगा जब जग में,
गहरा तम छाएगा मग में,
जब हिल-हिल जाएंगे भूधर,
डोल उठेगा भूतल सारा
दीप, तुम्हें तब जलना होगा !
.
• •
(211) मनुज-जीवन
.
क्या यही है मनुज-जीवन ?
.
मन दुखी है इसलिए तुम
मौन-स्वर में रो रहे हो,
हो रहे बेचैन इतने
आश सारी खो रहे हो,
पर, कभी मिलता सरस सुख, हँस लिया करते उसी क्षण !
.
हाथ अपने यदि चलाते
तो चलाते बंधनों में,
है नहीं तेज़ी तनिक भी
अब मनुज-उर-धड़कनों में
सत्य, शिव, सुन्दर कहाँ ? जीवन लिए है घोर उलझन !
.

कर न सकता न्याय कोई
स्वार्थ में जकड़ा हुआ जग,
बढ़ रहीं अगणित व्यथाएँ,
है मधुर जीवन न प्रतिपग,
हो गया है आदमी का आज तो पाषाण का मन !
.
• •
(212) धोखा हुआ
.
धोखा हुआ, धोखा हुआ !
.
मैं राह चलता गिर पड़ा,
था बीच में पत्थर पड़ा,
यह सोच कर बढ़ता गया—
'चलते रहो, चलते रहो !'
धोखा हुआ, धोखा हुआ !
.
बदली गगन में छा गयी,
आँधी प्रलय की आ गयी,
अंधे नयन को कर दिये,
यह सोचना, 'लड़ते रहो !'
धोखा हुआ, धोखा हुआ !
.
अब भावना से उठ रहा,
कर सत्य का अनुभव कहा—
'धरती बनाओ फिर चलो !'
आवेश के आधीन था
धोखा हुआ, धोखा हुआ !
.
• •

(213) साधना का मर्म

.

क्या चले कुछ दूर पथ पर, मन! सतत-आवेश भरकर,
क्या तपे हो अग्नि में तुम मौन, कुन्दन-से निखर कर ?

.

कब मिटे हो तुम जगत में शांतिमय जीवन बसाने ?
कब बढ़े हो गहन तम में दूर का आलोक पाने ?

./

हैं कहाँ देखे अभी इस विश्व में तूफ़ान निर्मम ?
कब किये हैं पार तुमने पंथ बिन पाथेय दुर्गम ?

.

है सहा मरुभूमि का कब शीत-गर्मी-ताप भीषण ?
कब हुए हैं तिक्त अनुभव, कब हुआ दुख-ग्रस्त जीवन ?

.

श्रम-कणों की धार फूटी क्या कभी इस फूल-तन से ?
आपदाएँ हैं सहीं क्या स्वस्थ निर्भय शांत मन से ?

.

ये चरण डगमग हिलेंगे जब कहोगे, 'सह रहे हैं !'
दुःख के कटु दुर्दिनों में, जब कहोगे, 'रह रहे हैं !'

.

जान जाओगे तभी तुम साधना का मर्म क्या है !
हो सतत संघर्ष का युग, फिर मनुज का धर्म क्या है !

.

• •

(214) जीवन-तरु

.

ये मुरझा कर टूट रहे हैं, मेरे जीवन-तरु के पल्लव !

.

दुख की उष्ण हवाओं ने आ सोख लिया सब प्राणों का रस,
कोमल दृढ़तर सब अंगों को हाय, शिथिल कर डाला बरबस,
रुधिर प्रवाहित करने वाली गतिहीन पड़ीं तन की नस-नस,

रह जाते अरमान अधूरे, अर्द्ध-डगर पर ही तरस-तरस,
उर में अभिलाषाएँ अगणित रह जातीं क़ैद वहीं वेबस,
मेरे जीवन का नंदन वन है पतझर-सा सूखा तहस-नहस,
भीषण रूप बना मरघट का, है मौन खगों का मधु-कलरव !
.
बिन विकसे खोयी कितनी ही सुरभित कलियाँ, कोमल किसलय,
डाली-डाली सूख रही है, पर सहता जाता मौन हृदय,
प्राण प्रकम्पित करने वाले स्वर में मन की कोयल गाती,
सूखी-सरि के निर्जन तट पर करुणा का संगीत बहाती,
आँसू की धाराएँ मिलकर गंगा-यमुना-सी लहरातीं,
पूरी गति से बाढ़ उमड़कर उर-घाटी में आ चढ़ जाती,
पर, आज बहाए ले जाती काँटों का दुखदायी वैभव !
.
• •
(215) रे मन
.
रे मन !
बीती गाथाओं की स्मृति पर
तुम अश्रु बहाना मत पल भर,
जीवन में आहें भरना मत
इससे दुर्बलता आती है,
धूल उदासी की छाती है,
.
बन जाता जीवन शुष्क-विजन !
रे मन !
.
रे मन !
मूक रुदन के गीत न गाना,
भूल निराशा ओर न जाना,

तूफ़ानों में दीपक से तुम
हँस-हँस तिल-तिल जलते रहना,
आघात सभी सहते रहना,

.

तभी तुम्हारा सार्थक जीवन !
रे मन !

.

• •

(216) आँसुओं का मोल

.

मूल्य मेरे आँसुओं का कब जगत पहचान पाया ?

.

देखता ही तो रहा वह आँसुओं की धार अपलक,
दो नयन निर्मम लिए बस स्नेह से हों रिक्त दीपक,
वेदना के स्वर मिलाकर किस मनुज ने गान गाया ?

.

कौन है जो सिसकियों का, मूक आहों का, मरण का,
पंथ सहचर ज़िन्दगी का मिल गया हो ठीक मन का,
कौन है जिसने हृदय की उलझनों से त्राण पाया ?

.

• •

(217) बहने देना....

.

बहने देना आँसू मेरे किन्तु, स्नेह-उपहार न देना !

.

पथ पर जब मैं रुक-रुक जाऊँ,
प्रति पग पर जब झुक-झुक जाऊँ,
तूफ़ानों से लड़ते-लड़ते
झंझा में फँस कर थक जाऊँ,
गिर-गिर चलने देना मुझको, क्षण भर भी आधार न देना !

.

ज्वार उठे सागर में चाहे,
नौका फँसे भँवर में चाहे,
देख घिरी घनघोर घटाएँ
धड़कन हो अंतर में चाहे,
बढ़ने देना मुझको आगे, हाथों में पतवार न देना !
.
अंधकार-मय जीवन-पथ पर,
कुश-कंटक मय जीवन-पथ पर,
संबल-हीन अकेला केवल,
अपना अन्तस्तल ज्योतित कर,
मैं उठता-गिरता जाऊंगा, सुलभ-ज्योति संसार न देना !
.
• •
(218) चुनौती
.
आज विश्व की महाशक्ति को मुझे चुनौती दे देने दो !
.
मानव-पथ पर,
युद्ध निरन्तर,
चारों ओर मचा कोलाहल
जाता जिससे आकाश दहल
मिटा सबेरा,
घिरा अँधेरा,
मुझको अपने उर-साहस की, आज परीक्षा ले लेने दो !
.
लहरें आयीं,
विप्लव लायीं,
तूफ़ान उठे सागर-तल में,
बिजली कड़की बादल-दल में,

पतवार नष्ट,
संबल विनष्ट,
अंधकार-मय भीषण क्षण में जीवन-नौका को खेने दो !
.
• •
(219) विनाश
.
मैं मिटता जाता हूँ प्रतिपल !
.
तारे छिप जाते अम्बर में,
लहरें मिट जातीं सागर में,
वीणा के स्वर लय हो जाते
बहते मारुत के सर-सर में
काल-धार में एक दिवस मैं भी लय हो जाऊंगा चंचल !
.
कुसुमों का दो-दिन का यौवन,
दो-दिन का भ्रमरों का गायन,
जब दो-दिन में ही सीमित है
उनकी इच्छाओं की धड़कन,
दो-दिन में मेरी भी काया नश्वर हो जाएगी दुर्बल!
.
दिन छिपता उड़ती धूलि गगन,
निशि ढलती जाती है प्रतिक्षण,
युग बीत रहे अपनी गति से,
होता रहता जग-परिवर्तन,
मैं भी जीवन-पथ पर चलता जाता लेकर अंतर-हलचल !
.
• •
(220) विकास
.

मैं खिलता जाता हूँ प्रतिपल !
.
तरुवर की डालों पर कलियाँ,
नभ में झिलमिल तारावलियाँ,
धीरे-धीरे आ खिल जातीं लेकर जीवन की ज्योति नवल !
.
सूखी सरिता छल-छल जल भर,
बूँदें मरुथल टप-टप पाकर,
जब जीवन पा जाता कण-कण, मैं भी भर लेता उर में बल !
.
भर कर मीठा हास जगत में,
आया नव मधुमास जगत में,
मेरे स्वर भी बोल उठे, जब कूक उठी पेड़ों पर कोयल !
.
• •
(221) जागरण
.
आज जीवन में सफलता की मुझे आहट मिली है !
.
आज तो आराधना का
इस हृदय की साधना का
फल मिलेगा, बल मिलेगा,
आज तो पतझार में अगणित नयी कलियाँ खिली हैं !
.
उठ रही हैं मुक्त लहरें,
भाव रोदन के न ठहरें,
पास यह गन्तव्य आया
हार का बंदी नहीं, जीत मुझसे आ हिली है !
.
मिट चुकी है रात काली,

छा रही है आज लाली,
हो रहा कलरव मनोहर
जागरण-बेला यही है, प्राण ने पहचान ली है !
.
• •
(222) रस-संचार
.
आज रस-संचार !
.
अश्रु के ले सिंधु को
दुःख उर से खो गया,
यह युगों के बोझ का
भार हलका हो गया,
गीत मन ने गा लिया
गूँजती झंकार ! / आज रस-संचार !
.
धूप जीवन की गयी
शांत प्राणों की जलन,
बादलों की छाँह में
मिल गया शीतल पवन,
पे्रम प्रिय का पा गया
मौन कर स्वीकार ! / आज रस-संचार !
.
लय निमिष में हो गये
कष्ट सब दिन-रात के
हो गया अंतर हरा
वाटिका-सम-पात के,
सुख चिरंतन पा गया
स्वर्ग कर साकार ! / आज रस-संचार!

.
• •
(223) वरदान
.
खुल गये आबद्ध अन्तर द्वार !
.
सिंधु करता जब गरज अतिहास ;
नाचती थी मृत्यु आकर पास,
आँधियों की गोद में जब हो रहा था—
अब गिरा, हा ! अब गिरा, तब
हाथ में दृढ़ आ गयी पतवार !
.
याचना करता रहा हैरान
पंथ पर विक्षुब्ध मन म्रियमाण,
नग्न भूखी ज़िन्दगी साकार हो जब
ले रही थी साँस अंतिम
मिल गये तब विश्व के अधिकार !
.
डूबते से जा रहे थे प्राण ;
शुष्क निर्जन था सकल उद्यान
पीत-पत्तों को गँवा कर डालियाँ जब
लुट गयीं तब, दूर से आ
चली पड़ी मधुमय बसंत-बयार !
.
• •
(224) परिवर्तन
.
जग के उर में किसने डाली आज नये फूलों की माला,
खाली प्याली में किसने रे भर-भर कर छलका दी हाला !
.

सूखे तरु-तरु, पल्लव-पल्लव में फिर से आयी अरुणाई,
कण-कण झूम उठा चंचल हो, चमक दिशाएँ भी मुसकाईं !
.
है बनी सुहागिन धरा-वधू जिसके अंग-अंग में शुचिता,
कोमल नव-पंखुरि-सी सुन्दर मनहर शीतल जिसकी मृदुता!
.
झूम रही है जगती सारी उमड़ी सरिता-सी दीवानी,
खेल रहा है मानों टकरा पथ के पाषाणों से पानी !
.
जग का उपवन स्वर्ण अलंकृत, बीती बोझिल युग-रात घनी,
नभ के परदे पर यौवन की नव लाली उतरी स्नेह-सनी !
.
नव-संसृति में आया जीवन, अणु-अणु में है कंपन सिहरन,
चंचल लहरों से डोल उठा जगती-सरि का सोया तन-मन!
.
गुंजित नभ-भू आँगन, होता चिड़ियों का मीठा कलरव,
परिवर्तन की मधु बेला में सबने रूप धरा है नव-नव !
.
• •
(225) एकाकीपन
.
यह आज अकेलेपन पर तो
मन अकुला-अकुला आता है !
.
सुनसान थका देता मन को,
एकांत शिथिल करता तन को,
अब और नहीं एकाकीपन
जीवन के साथ रहे प्रतिक्षण,
यह उलझा-उलझा-सा यौवन
अब तो भार बना जाता है !

.
कब तक सूनी राह रहेगी ?
कब तक प्यासी चाह रहेगी ?
इतनी काली सघन निशा में
चलना कब तक एक दिशा में ?
यह रुका हुआ जीवन, उर में
भाव निराशा के लाता है !
.
• •
(226) साथी से
.
मिले हो आज जीवन की डगर पर
किंतु आगे साथ मेरा सह सकोगे क्या ?
अभी जीवन-निशा पहला प्रहर, तारे
गगन में आ, अनेकों आ, रहे हैं छा,
सघनतम आवरण छाया, नहीं दिखती
सफलता की प्रभाती की कहीं रेखा,
नहीं दिखता कहीं भी लक्ष्य का लघु
चिन्ह, आँखों को यहाँ पर फाड़ कर देखा !
निराशा से बचा लोगे, सतत-गति,
लक्ष्य-उन्मुख प्रेरणा-स्वर कह सकोगे क्या ?
.
नहीं संदेह, प्राणों को यहाँ पाथेय,
साधन-हीन हो चलना असंभव है,
नहीं संदेह, दीपक को बिना लघु
स्नेह-बाती के कहीं जलना असंभव है,
नहीं संदेह, आँधी में भयावह
नाश का सामान हो पलना असंभव है !
तुम्हारे प्यार के बल पर चला हूँ,

पर, भला आगे सदय तुम रह सकोगे क्या ?

.

नहीं तो चल रहा हूँ मौन, जीवन-पंथ
पर आगे अकेला ही, अकेला ही,
नहीं तो चढ़ रहा हूँ पर्वतों को
आज मैं भागे अकेला ही, अकेला ही,
चला हूँ चीरता सागर-लहरियाँ
बाहुओं के बल, घिरी जब नाश बेला ही !
अभय वरदान देकर, मूक मन से
कह सकोगे यों, 'नहीं तुम बह सकोगे !' क्या ?

.

• •

(227) गाओ गीत

.

तुम कहते, 'गाओ आज गीत !
है पर्व मिलन का शुभ पुनीत !'

.

जीवन में सुखमय लहरों का
कंपन बरबस भर देते हो,
और तभी आ चपके-चुपके
उर धन-राशि चुरा लेते हो,
खो जाते भाव उदासी के
तुम दुःख भुला देते अतीत !

.

तुम मधु-पूरित शीतल निर्झर
हो मेरी जीवन-सरिता के,
छा जाते हो प्रतिपल मेरे
प्राणों के स्वर में कविता के,
मूक पराजय की बेला में

मैं जाता तुमको देख जीत !

.

• •

(228) तुम

.

तुम मेरे जीवन-तरु के
हो कोमल-कोमल किसलय !

.

तुमसे मेरे यौवन की
होती है पहचान प्रखर,
तुमसे मुरझाए मुख का
जाता है सौन्दर्य निखर,
देते मेरे जीने का
हिल-हिल मिल-मिल कर परिचय !

.

आँधी-पानी में, माना
मैं जड़ से हिल जाता हूँ,
पर, प्रतिपल अंतरतम से
गीत तुम्हारा गाता हूँ,
सतत तुम्हारे ही बल पर
लड़ता रहता बन निर्भय !

.

• •

(229) उन्मेष

.

आज मन बेचैन है !
वह कौन है
जो कर रहा अविराम आकर्षित,
अधिक चंचल
कि मारुत भी पिछड़ता जा रहा है ?

कौन-से विश्वास की ज्वाला समायी है
कि जिससे हर पिरामिड-भाव अंतर के
पिघलते जा रहे हैं ?
कि जिसके हेतु तूने
प्राण की सब शक्ति
सब पुरुषार्थ
निर्भय रख दिया है दाँव पर !
.
अंतर, भुजा का बल,
शिराओं का धधकता रक्त निर्मल
आज आँधी बन
विफलता के सभी बादल
गगन से दूर अविरल कर
सुनहली नव-किरण
लाना यहाँ पर चाहता है !
कौन-सा ज्योतित सबेरा
आज आशा की लकीरें
मन-पटल पर कर रहा अंकित ?
नवल-निर्माण के हित
दे रहा जो प्रेरणा ?
.
यह राह —
जिस पर दृष्टि केन्द्रित;
है बड़ी, फैली हुई मरुथल सहारा-सी,
कि जिस पर हैं
कहीं टीले गरम जलहीन रेतीले,
कहीं फैले हुए मैदान
मृग-मन को भ्रमित करते हुए।

जिन पर दिखाई दे रहे हैं
हड्डियों के ढेर
गीले शव
कि जिनकी जीभ बाहर होंठ को छू
चाटती ही रह गयी है !
.
पर, बोल तो मन —
कौन-सा है स्वप्न ऐसा
जो जगत में कर रहे साकार ?
जिसके हित नहीं रे
आज तक स्वीकार
असफलता, निराशा-भार !
.
• •
(230) कामना
.
कामना मेरी !
.
गगन-सी बन,
विकल सिहरन,
प्राण में रह कर समायी री नहीं पाती
सघन नव-बादलों-सी कल्पना मेरी !
.
सरल दीपक,
चमक अपलक,
वंदना के स्वर हृदय में आज तो बंदी !
सजी है पूर्ण जीवन-अर्चना मेरी !
.
जलन खोयी,

अमृत धोयी,
जल रही अविरल अकम्पित लौ हृदय की यह
सतत उद्देश्य-लक्षित साधना मेरी !
.
• •
(231) जीवन का अभिनय
.
संसार समझ कब पाया
मेरे जीवन का अभिनय !
.
मेरे जीवन की धरती पर
ऊबड़-खाबड़ पथ
सर-सरिता, गिरि-वन,
मैदान-पठार बने;
मरुथल, दलदल;
सुख-दुख का क्रम,
उत्थान-पतन
मुसकान-रुदन
है हार-विजय ?
संसार समझ कब पाया
मेरे जीवन का अभिनय !
.
मेरे जीवन के अम्बर में
आँधी झंझा,
हिम का वर्षण,
पानी की बूँदों की रिमझिम,
गर्जन-स्वर है, विद्युत कंपन ;
क्षण देदीप्य अमर सविता-चंदा जैसे,
उल्काएँ भी नश्वर !

सुन्दर और असुन्दर,
शिव और अशिव
भावों का संचय !
        संसार समझ कब पाया
        मेरे जीवन का अभिनय!
.
•   •
(232) नहीं है ...
.
नहीं है रोशनी यह वह
जिसे बादल जलाता है !
.
नहीं वैसी चमक तड़पन,
नहीं वैसी भरी सिहरन
नहीं उन्माद है वैसा
        जिसे यौवन सजाता है !
.
नहीं बल आँधियों का यह,
नहीं स्वर दृढ़-हियों का यह
        नहीं वह गीत जीवन का
        जिसे आकाश गाता है !
.
•   •
(233) सत्य
.
दीप जलता है नहीं, यह
स्नेह का सागर रहा जल !
.
ज्ञान, संस्कृति, मनुज-दर्शन,
ध्येय, जन, साहित्य, जीवन

सब बदलते जा रहे, अविराम गति से पग मिला कर,
युग नहीं चलते कभी भी
आदमी केवल रहे चल !
.
रात-दिन अविश्रांत नर्तन,
ग्रीष्म-वर्षा, फिर शिशिर-क्षण,
क के उपरांत आकर, हैं सदा करते युगान्तर,
शून्य में अविचल प्रभाकर,
भूमि ही गतिशील प्रतिपल !
.
ज़िन्दगी क्या ? एक हलचल,
मूक-जड़ता में रही पल,
है शिथिल, उत्साह दुर्दम, वेग गति, रुक-रुक, सरल,दृढ़,
मुक्त बहता है न जीवन ;
सिर्फ़ बहती धार चंचल !
.
• •
(234) वेदना
.
घाव पुराने पीड़ा के
जाने-अनजाने में सबके
आज हरे गीले सूजे !
रह-रहकर बह जाती असह्य लहर,
मानो बिजली का तीव्र करेंट ठहर
मांस मौन तड़पा देता
नाली के कीड़ों जैसा इधर-उधर!
जग के सारे ओर-छोर घेरे,
हृदय विदारक
नाशक

मूक अभावों की
धूल भरी अंधी
आँधी बहती जाती !
.
मर्माहत यौवन चीख रहा
रोक भुजाओं से असफल !
आज निराशा के बादल
छाये नभ में उमड़-घुमड़;
जीवन में,
जन-जन-मन में हलचल !
.
आज युगों के घाव हरे !
हर उर में
दुख-दर्द भरे !
.
• •
(235) अभी नहीं....
.
अभी नहीं तूफ़ान उठा है !
.
कुहराम नहीं
काँपी न मही
टूटे न अभी नभ के तारे,
प्रतिद्वन्द्वी स्वर न थके हारे
अभी नहीं जन-जन के मन में
मुक्ति इष्ट का भाव जगा है !
.
संघर्ष अथक
नव-ज्योति चमक

फूटी न कहीं अंदर-बाहर,
किंचित उमड़ा न हृदय-सागर,
अभी नहीं नव-रवि की किरणें
वसुधा पर तम विजन घना है !
.
सुनसान डगर
बीहड़ मर्मर
तरुवर सूखे जर्जर लुण्ठित,
संसृति का कण-कण अपमानित,
अभी नहीं सबके जीने का
पीड़ित जग ने मंत्र सुना है !
.
बदले दुनिया,
गुज़रें सदियाँ
क्रूर दमन की, बर्बरता की,
मानव-मन की दुर्बलता की,
अभी न नव जग में माता ने
नव शिशु का रुदन सुना है !
.
• •
(236) जल्दी करो !
.
जल्दी करो, जल्दी करो !
.
तूफ़ान सिर पर आ गया
भीषण प्रलय-तम छा गया,
मृत ध्वंस का अभिनय हुआ,
पथ से विपथ सब हो गया,
दृढ़ ओट की चिन्ता अरे

जल्दी करो, जल्दी करो !

.

नभ-स्पर्श करने उठ रहीं
लहरें प्रखर बस में नहीं,
यह नाव डगमग हो रही
पतवार दे धोखा गयी
बस, पास का तट देख लो
जल्दी करो, जल्दी करो !

.

ज्वालामुखी है फट रहा,
भूकम्प से थल कट रहा,
जल-मग्न जनपद हो रहे,
जी तोड़ भगती बस्तियाँ,
नव-शक्ति का संचय अथक
जल्दी करो, जल्दी करो !

.

• •

(237) जीवन-धारा

.

जीवन द्रोह अभिनव गीत
सुनकर मत बनो भयभीत
यह अरोहमय नूतन सृजन-संगीत !

.

जड़वत्
शैल-गति-निर्माण जैसी रीति की
सहगामिनी-धारा
मनुजता की सृजनशीला नहीं है !
(कौन कहता, 'व्योम यह नीला नहीं है !')

.

बढ़ रहा हो ढाल पर रुक-रुक
धरा-केन्द्रिय-बल अभिभूत
फैला ग्लेशियर गंगोत्री के पार,
करता लघु सृजन-संहार ;
लघु-लघु रूप का परिणाम
जीवन-द्रोह का झरना नहीं है !
.
लोकरुचि मेरे समय की दिव्य है,
कोई मलिनवदना नहीं है !
.
छा रही युग-भित्ति पर
जगमग अरुणिमा री !
बड़े विश्वास की
गरिमा अनोखी री !
.
• •
(238) जीवन-दृष्टि
.
जीवन में तुमको होना है
श्रमशील अथक उन्मुक्त निडर !
.
दीपक की लौ को उकसाकर,
पूजा के सामान जुटाकर,
वरदान अमरता का प्रतिपल
मत माँगो रे जड़ पाहन से
गा-गा अगणित वंदन के स्वर !
.
इतना भी रे क्या पागलपन,
इतनी भी क्या यह मौन लगन,

अर्पित करते मृत-पुतलों को
तन-मन-धन, जीवन-सुख, वैभव
दुनिया के किस आकर्षण पर ?
.
यह मानवता का धर्म नहीं,
यह मानवता का मर्म नहीं,
संघर्षों से घबराकर जो
सभय पलायन धारण करता
कह, 'मिथ्या जग, जीवन नश्वर !
.
जीवन जब है एक समस्या—
कर्मों का ही नाम तपस्या,
प्राणों के अंतिमतम पल तक
जग में जमकर संघर्ष करो
बहता जाए जीवन-निर्झर !
.
• •
(239) आशिष्
.
मैं लिए हूँ
प्राण की यह रिक्त झोली
माँगता हूँ स्नेह-निर्मल,
देखना बस चाहता हूँ
हाथ ममता का
उपेक्षित शीश पर !
यदि पा गया तो—
प्राण में भर वेग दुर्दम
और धुन तूफ़ान-सी लेकर
अभावों को मिटाने

बढ़ चलूंगा !
.
वेदना-अवसाद के,
अवसान के युग
जाएंगे बन
हर्ष के
उत्थान के क्षण !
.
• •
(240) असह
.
अब न रहा जाता !
.
प्रिय दूभर जीना ;
मूक हृदय-वीणा,
आघात समय का
अब न सहा जाता !
.
करुण कथा कितनी,
गरल व्यथा कितनी,
लय में छंदों में
अब न कहा जाता !
.
जीवित नेह कहाँ ?
सुन्दर गेह कहाँ ?
मन दुख-सरिता में
अब न नहा पाता !
.
हैं मौन सुखद स्वर,
जीवन शांत लहर,

बीहड़ पथ से रे
अब न बहा जाता !
.
• •
(241) अन्तर्बोध
.
जब-जब मैंने सोचा मन में
क्या सार रखा है जीवन में ?
है जब क़दम-क़दम पर फिसलन
औ' अपमान, व्यथाएँ, बंधन ;
पर, मिटने की जब-जब ठानी
मम वसुधा-सम प्राण न माने !
.
इति का कहना क्या, जब अथ में
दुख-ही-दुख है जीवन-पथ में,
शूलों का अम्बार लगा है,
कटुता का बाज़ार लगा है,
पर, रुकने की जब-जब ठानी
मम ध्रुव-सम ये प्राण न माने !
.
• •
(242) प्रतिकूलता
.
स्नेह हीन जीवन-दीपक की
होती जाती है ज्योति मंद !
.
मिलती प्रतिपग पर असफलता,
बढ़ती जाती है व्याकुलता,
जीवन-सुख के सब द्वार बंद !
.

जड़ता का अँधियारा छाया,
बरखा-आँधी का युग आया,
हलचल प्रतिपल अन्तर्द्वन्द्व !
.
• •
(243) आशा-किरण
.
जीवन में
प्रतिकूल समय के
कुटिल प्रहारों को
सहने दो !
.
गत जीवन के
रंग-बिरंगे, मधुमय
सपनों के चित्रों को
मत देखो,
मत सोचो उन पर
दूर कहीं
विस्मृत-सागर के तल में
बहने दो !
.
एक समय आएगा ऐसा
जब सुख की बरखा होगी,
दुख की खेती मिट जाएगी !
जो इस आशा पर हँसते हैं
उनको हँसने दो !
.
• •
(244) जीवन-ज्वाला
.

यह मम जीवन-ज्वाला इसको
तुम धू-धू स्वर में गाने दो !
.
प्राणों के सारे अशिव-भाव
इस ज्वाला में जाएंगे जल,
जीवन के राग-विराग सभी
इसमें हो जाएंगे ओझल,
मन को कलुषित करने वाला
धूम्र विषैला उड़ जाने दो !
.
आँसू मत लाना, आँसू से
ज्वाला ठंडी पड़ जाएगी,
आहें मत भरना; आहों से
वह सीमित ना रह पाएगी,
इसको तो प्रतिपल जीवन के
सम्पूर्ण गगन में छाने दो !
.
• •
(245) निवेदन
.
अभिशाप भले ही दे दो, पर
वरदान नहीं देना मुझको !
.
जब सविता जैसा चमक पड़ूँ,
जब मधुघट बनकर छलक पड़ूँ,
तब लघुता मुझमें भर देना,
अभिमान नहीं देना मुझको !
.
मूक ग़रीबी का साया हो,

जब सुख माया-ही-माया हो,
    संघर्षों में मिटने देना,
    पर, दान नहीं देना मुझको !
.
•   •
(246) स्वावलंब
.
मैं बुझते दीपक का न कभी
धूमिल नीरव उच्छ्वास बना !
.
जीवन के कितने ही भ्रम में,
भूला न कभी अपने क्रम में,
    मैं तो अविरल बहने वाली
    सरिता के उर की साँस बना !
.
मैं अपना ख़ुद पतवार बना,
मैं अपना ख़ुद आधार बना,
    निज की निर्भरता पर रखता
    अविचल जीवित विश्वास घना !
.
•   •
(247) समरस
.
मैंने आज न पहले भी अपने पर अभिमान किया !
.
जब जीवन-नभ में चमका
मैं स्वर्ण-सितारा बन कर,
सब की मुझ पर आँख उठी
देखा जब ऐसा अवसर,
पर, मैंने न कभी अपने क्षणिक-सुखों का गान किया !

.
अंतर में समझा होता
इस उन्नति का मूल्य अगर,
गर्वीली रेखाएँ आ
बरबस छा जातीं मुख पर,
पर, लोचन झुक-झुक जाते, सुन मैंने बलिदान किया !
.
• •
(248) सुख - दुख
.
सुख-दुख तो मानव-जीवन में बारी-बारी से आते हैं !
जो कम या कुछ अधिक क्षणों को मानव-मन पर छा जाते हैं !
.
मानव-जीवन के पथ पर तो संघर्ष निरंतर होते हैं,
पर, गौरव उनका ही है जो किंचित धैर्य नहीं खोते हैं !
.
यह ज्ञात सभी को होता है, जीवन में दुख की ज्वाला है,
यह भास सभी को होता है, जीवन मधु-रस का प्याला है !
.
हैं सुख की उन्मुक्त तरंगें, तो दुख की भी भारी कड़ियाँ,
ऊँचे-ऊँचे महल कहीं तो, हैं पास वहीं ही झोंपड़ियाँ !
.
कितनी विपदाओं के झोंके आते और चले जाते हैं !
कितने ही सुख के मधु-सपने भी तो फिर आते-जाते हैं!
.
क्या छंदों में बाँध सकोगे जन-जन की मूक-व्यथाओं को ?
औ' सुख-सागर में उद्वेलित प्रतिपल पर नव-नव भावों को ?
.
• •
(249) काम्य
.

ओ मेरे मन ! तुम आकांक्षाओं के भंडार बनो,
नव-नव स्वस्थमना इच्छाओं के रे आगार बनो !
.
जीवन में प्रतिपल मादकता हो, गति हो, सिहरन हो,
अंतर में जीने का नव-उत्साह भरा कंपन हो !
.
रुद्ध अचेतन कुण्ठित हो न कभी भावों की सरिता,
प्राणों की वेगवती बहती जाये जीवित कविता !
.
अनुभव हो न कभी जीवन में हृदय शिथिल होने का,
अवसर आये न कभी असमय संयम-बल खोने का !
.
भाग्य अधीन नहीं हो किंचित विस्तृत भावी का पथ
संघर्षों में ही बढ़े अथक प्रतिपल जीवन का रथ!
.
• •

डा. महेंद्रभटनागर, 110 बलवन्तनगर, गांधी रोड, ग्वालियर — 474 002 [म.प्र.]
फ़ोन : 0751- 4092908 / मो. 98 93 40 97 93